Sem. 2, MJ-3

अज्ञेय की काव्यगत - विशेषताएँ

प्रकृति से यायावर और उग्र क्रान्तिकारी प्रयोगधर्मा कवि अज्ञेय स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता का नेतृत्व करने वाले सशक्त हस्ताक्षर हैं। उन्होंने हिन्दी कविता को जहाँ अस्तित्ववादी चिन्तन से संपृक्त किया, वहीं भाषा और शिल्प का एक नया मुहावरा भी प्रदान किया। उन्होंने हिन्दी काव्य - परम्परा को संवेदनात्मक जटिलता को बौद्धिक संयम के साथ कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की। एक सर्जक कलाकार होने के साथ ही वे सेना में भी रहे, उग्र क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेकर कई बार जेल गये तथा देश - विदेश में लगातार यायावरी करते रहे। वे केवल कवि नहीं बल्कि प्रख्यात उपन्यासकार, कथाकार, समीक्षक और चिन्तक भी रहे हैं। पत्रकार की भी भूमिका उन्होंने बखूबी निभाई।

युग - निर्माता कवि की प्रारंभिक कविताएँ छायावादी विशेषताओं से युक्त हैं। 'भग्नदूत', 'बन्दी - स्वप्न', 'हिय - हारिल' जैसे प्रारंभिक कविता - संकलनों में यह प्रवृत्ति स्पष्ट है। किन्तु अपनी विलक्षण बौद्धिक प्रतिभा से उन्होंने हिन्दी कविता को 'अन्वेषण की राह' दिखाकर उसे प्रयोग के आधार पर प्रतिष्ठित किया। 1943 ई० में प्रकाशित 'तार - सप्तक' के सात कवियों की कविताओं का संपादन अज्ञेय जी ने किया, जहाँ उन्होंने कहा - 'हम नई राहों के अन्वेषी हैं।' पुराने उपमानों के स्थान पर वे नए उपमानों के प्रयोग पर बल देते हैं — "ये उपमान मैले हो गए हैं
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच।"
तार - सप्तक के बाद उन्होंने दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक और चौथा सप्तक का भी सम्पादन किया और हिन्दी कविता के इतिहास में 'प्रयोगवाद' को प्रतिष्ठित किया।

कवि अज्ञेय की बयालीस वर्षीय काव्य - यात्रा के अनेक चरण हैं, जो मुख्यतः ग्यारह कविता - संग्रहों में संकलित हैं, वे हैं — पूर्वा, चिन्ता, बावरा अहेरी,

इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, अरी ओ करुणा प्रभामय, आँगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, सुनहले शैवाल, क्योंकि मैं उसे जानता हूँ, सागर-मुद्रा, और पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ। 'कितनी नावों में कितनी बार' संग्रह पर अज्ञेय जी को 1978 ई० में ज्ञानपीठ पुरस्कार का सम्मान मिला। उनकी कविताएँ व्यापक संवेदना की खोज में अपना विषय बदलती रही है। वे व्यक्ति से समाज तक, प्रेम से दर्शन और विज्ञान तक, यांत्रिकता से लेकर लोक जीवन तक, प्रकृति से लेकर मानव-सौन्दर्य तक, यातनाबोध से लेकर विद्रोह की ललकार तक विस्तृत हैं। किन्तु सबसे अधिक व्यक्तिनिष्ठता की ध्वनि उनके काव्य में है। शब्द की अर्थवत्ता और उसकी सर्जनात्मकता की खोज के रूप में उनकी कवितायें देखी जा सकती हैं। 'नदी के द्वीप' कविता में जहाँ अस्तित्व बोध है —

"कहीं फिर पैर टेकेंगे।
कहीं फिर भी खड़ा होगा नये व्यक्ति का आकार।"

तो 'सर्जना के क्षण' कविता में क्षण-बोध के प्रति कवि समर्पित है — "एक क्षण भर और,
लम्बे सर्जन के क्षण कभी भी हो नहीं सकते।"

एक ओर, प्रेम का आदर्श बतलाते कवि कहता है —

"प्राप्ति का सुख प्रेम है, पर
समर्पण भी धर्म होता!"

तो वहीं वे दुख-भावना का भी उन्नयन करते हैं —

"दुःख सबको माँजता है
और —
चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना वह न जाने, किन्तु-
जिनको माँजता है
उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखें।"

इसी तरह, व्यंग्य-बोध भी वहाँ उतना ही गहरा है। साँप जिसे नगर में बसना नहीं आया से कवि पूछता है —

"तब कैसे सीखा डँसना —
विष कहाँ पाया?"